UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182935

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP—68—11-1-68—2,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81 C52C   Accession No. H3572

Author चेतन, रामावतार.

Title चाँद से नीचे. 1958.

This book should be returned on or before the date last marked below.

चाँद से नीचे • रामावतार चेतन

हिन्दी भवन
इलाहाबाद • जालंधर

प्रकाशक
इन्द्रचन्द्र नारंग
हिन्दी भवन
३१२ रानी मंडी
इलाहाबाद ३

●

प्रथम संस्करण
१९५८

●

**तीन
रुपये**

●

मुद्रक
इन्द्रचन्द्र नारंग
कमल मुद्रणालय
३१२ रानी मंडी
इलाहाबाद ३

श्री सुमित्रानन्दन पन्त

को

सादर

आज जो अंकुर है
कल वही पौदा होगा
और परसों वही
बाजार का सौदा होगा

चाँद से नीचे : १
एक मनस्थिति : ३
सर्दी की शाम : ५
मैं, तुम और वे : ६
जिन्दगी है ज्वार : ८
क्रेऑन की पेंसिल : १०
बिल्ली का रास्ता : ११
दोषों की भीड़ : १२
साक्षात : १३
वह आया था : १४
निवेदन : १७
कटी शाम : १८
सपनों का दान : १९
अपने ही गीतों के प्रति : २१
परमों तक : २३
वस्तुसत्य : २४
बासी जीवन : २५
जाली के पार : २६
लोकाचार : २७
बाहरी अस्तित्व : २८
जीवन का संगीत : ३०
बस सेवा : ३२
वाष्पगामिनी : ३३
दर्जी : ३४
बाज़ार : ३५
लोकदार व्यक्तित्व : ३६
स्टीम रोलर : ३७
खून और रुपये : ३८
शार्ट कट : ३९
दर्पण : ४०

भाड़ और चने : ४१
राह का प्रश्न : ४२
डाई प्रिंट : ४३
ऊँट : ४४
उपन्यास का पहला पन्ना : ४७
जागते सोते : ४६
कौए : ५१
अध्यात्म : ५२
प्रतिक्रिया : ५३
रद्दी की टोकरी : ५४
खून : ५५
बुझी हुई छुरी : ५६
आगामी कल : ५७
संस्कार : ५८
स्वर साधन : ५६
महाजनो येन गतः स पन्थाः : ६०
कुत्ता छाप आदमी : ६१
आज का सत्य : ६२
एक पत्रोत्तर : ६३
पब्लिक मीटिंग : ६५
मकड़ी : ६६
मुखपृष्ठ : ६७
गज भर लम्बी आँख : ६८
मितव्यय : ६६
ज़रूरी बात : ७०
बिखरे पन्ने : ७२
बाढ़ के बाद : ७३
दीवारों से : ७५
मेरा अधिकांश : ७६
आहत सत्य : ७८

चाँद से नीचे

से नीचे

चाँद आ रहा धीरे धीरे !

जमे धूल के धब्बे तन में
पार क्षितिज के, किसी धूल पूरे आँगन में
वह मनमानी खेलकूद के बाद आ रहा धीरे धीरे !
चाँद आ रहा धीरे धीरे !

याद आ रहा धीरे धीरे
अपना धूल भरा वह शैशव
जब कि चाँद बेहद प्यारा था
चाँद निगाहों का तारा था
घड़ियों किया निहारा इकटक
लेकिन नहीं थका हारा था ।

बेशक, चाँद तभी प्यारा था—
अब तो वैसी बात नहीं है ;
शैशव पीछे छूटा
अब तरुणाई तन को चूम रही है ।
आज
चाँद कुछ नहीं
चाँदनी बहुत अधिक प्यारी लगती है
जिसमें डूबी हुई धरा पर
तरुणाई वारी लगती है ।

वैसे हम काफी विकास कर चुके,
बढ़ चुके, सुधर चुके हैं
किन्तु, चाँद को छोड़

चाँद से कितने नीचे उतर चुके हैं
और यहीं तक से भी
कोई निश्चय अन्त नहीं दिखता है ;
लगता है कि चाँदनी का भी
स्वाद जा रहा धीरे धीरे !

चाँद आ रहा धीरे धीरे,
जमे धूल के धब्बे तन में
पार क्षितिज के किसी धूल पूरे आँगन में
वह मनमानी खेलकूद के बाद आ रहा धीरे धीरे !

एक मनस्थिति

जाने क्यों, उस दिन
कुछ ऐसा मन में आया—
फूलों का एक बड़ा ढेर
घर पर लाया,
फर्श पर बिखराया।
मन में था, कुचलूंगा,
एक एक को
जूते के नीचे मल दूँगा।
जाने क्या आग थी
ध्यान नहीं फूलों से
ऐसी क्या लाग थी।

फूलों पर
एक घृणा भरी दृष्टि फेर कर
आँखें तरेर कर
एक बड़ा क्रोध भरा
फूलों पर पैर धरा !

किन्तु,
यह क्या हुआ
किस पिशाच ने छुआ
पैर हिला, काँप गया
सारा तन हाँप गया
स्वेद से सना बेदम,
पिछल गया एक कदम।
कुचले उन फूलों को

अंजलि में बाँध लिया
सीने पर साध लिया।

... ...

... ...

फूलों का दोष न था,
फूलों पर रोष न था!

सर्दी की शाम

सात बज गए

सूरज डूबा
ठंडी ठंडी बहीं हवाएँ
दाँत बज गये !

जैसे आधी रात
अभी से ऐसी सूनी गाँव की गली,
पतली पतली
ओस गिर चली,
भीगी बकरी जैसा
भीगा धुआँ
घरों से सटा जा रहा,
सिरा नाक का कटा जा रहा,
दीपक है
सहमा सहमा सा काँप रहा है,
धीमा धीमा सा अलाव है
हाँप रहा है,
डोल गए सब
डालों पत्तों में थिहरन है,
गायों, बैलों, बिल्ली, कुत्तों में सिहरन है !

ठिठुरे सिकुड़े सटे
गात से गात बज गए !
सात बज गए,
सूरज डूबा
ठंडी ठंडी बहीं हवाएँ
दाँत बज गए !

मैं, तुम और वे

मैं, तुम, वे
कुछ इतने चले
घिसे तलवे !

फिर भी फल वे
जो मिलने थे
क्या अभी मिले ?
क्या चट्टानों के उर पिघले ?
शायद चलने के लिए
चले आए अब तक !
ऐसा कब तक कर सकते हैं !
मर सकते हैं
परसों या कल
या अभी अभी !
क्या सोचा भी—

कल वे जो आएँगे
इस धरती पर तलवे
कोमल वे कहीं अधिक होंगे ;
वे दिक होंगे
उतने से भी
जितने के हम बिलकुल आदी,
कल सुविधाएँ विकसी होंगी
व्यापकतर होगी आज़ादी ।

आखिर पूरे सपने होंगे,
जो आएँगे अपने होंगे !

कुछ और अधिक सुन्दर धरती पर
जो कल आने वाले हैं
(कुछ कर डालें ऐसा कि)
आज के पहिए में
कल नहीं पिसें !
वे कोमल तलवे नहीं घिसें !

ज़िन्दगी है ज्वार

ज़िन्दगी है ज्वार
भाटा तो नहीं है,
यह उँचाई है
सपाटा तो नहीं है !

आ रही हैं पीढ़ियाँ जो पीढ़ियों पर
ज़िन्दगी डग धर रही है सीढ़ियों पर !
है अनन्त उँचान जिस पर चढ़ रही यह
नित्य अपने रूप में कुछ गढ़ रही यह !

झाड़ झंखड़ काट डाले ज़िन्दगी ने
अन्न से घर पाट डाले ज़िन्दगी ने,
ज़िन्दगी ने सात सागर बाँध डाले,
ज़िन्दगी ने व्योम में तन साध डाले,
ज़िन्दगी एवरेस्ट ऊपर चढ़ चुकी है
ज़िन्दगी नक्षत्र-वैभव पढ़ चुकी है !

ज़िन्दगी चलती गई है
रुक न पाई
टूटती जुड़ती गई है
झुक न पाई ।
यह सदा भरती गई
रीती नहीं है
मौत हारी है
कभी जीती नहीं है !

ज़िन्दगी की बाढ़
घाटा तो नहीं है !

यह उँचाई है
सपाटा तो नहीं है !
ज़िन्दगी है ज्वार
भाटा तो नहीं है !

क्रेयॉन की पेंसिल

ऐ,
उठो,
लेटे हुए अँगड़ाइयाँ क्या भर रहे हो;
पृष्ठ कोरा समय का
कब से प्रतीक्षा कर रहा है!
कर हिलाओ
डाल दो कुछ अमिट रेखाएँ स्वयं की,
काम में लाओ इसे
यह घिस नहीं सकती
डरो मत,
ज़िन्दगी है यह
कोई
क्रेयॉन की पेंसिल नहीं है!

बिल्ली का रास्ता

बिल्ली का रास्ता
अपने से जिसका
दिन प्रतिदिन का वास्ता !

(कहते हैं,
बिल्ली के हाथ में
अनागत है !)
घर से निकलते ही
चार कदम चलते ही
आड़े आ जाना तो
बिल्ली की आदत है ।
लेकिन, तुम में हो हिम्मत
तो क्या हिम्मत है—
बिल्ली आड़े आए
राह काट कर जाए ।

आड़े दिखलाई दे बिल्ली
तो डाट दो !
दौड़ो तुम स्वयं
राह बिल्ली की काट दो !
बिल्ली से तेज दौड़ सकता है आदमी,
बिल्ली की राह मोड़ सकता है आदमी !

दोषों की भीड़

किसका दोष
कि छूने की प्यासें न सही जातीं भीड़ों में ?
किसका दोष
कि बाँहों से बाँहें, घिस हो जातीं भीड़ों में ?
किसका दोष
कि दाएँ के पीछे बायाँ कन्धा हो जाता ?
किसका दोष
उँगलियों भीतर, वेणी का फन्दा हो जाता ?
किसका दोष
कि गर्म बड़ी सी साँस, कपोलों को छू जाती ?
किसका दोष
पराये तन पर बूँद पसीने की चू जाती ?

दोष किसी का भी हो
पर ये दोष बहुत प्यारे लगते हैं,
कड़ी प्यास में ओसों के संतोष,
बहुत प्यारे लगते हैं !

साक्षात्

मिलती हर आँख पर
आँखें गड़ाता हूँ,
सारा अपनापा
हर साँस पर चढ़ाता हूँ !
इतने पर भी कोई
अपना क्यों दिखता नहीं ?
....

ऐसे में सारा जग
सपना क्यों दिखता नहीं ?

वह आया था

निस्संकोच चला आया था
मेरे पढ़ने के कमरे में
बड़े मज़े में
जैसे वह उसका ही घर था !
मफलर था रेशमी गले में,
गमले में से बेले के
आ खुशबू बिखरी
सूरत निखरी निखरी सी
मुसकान ओठ पर
लिये कोट पर
पुष्पराज की कली
एक कोना कालर का,
सरका सीने की थैली से
बाहर को रुमाल सतरंगा
कुछ बेढंगा बालों का रुख !
मेरे सम्मुख
लगी मेज पर
हाथ टेक कर
प्यासी आँखों मुझे ताकता
भाव आँकता
बहुत पास
वह अनायास आ खड़ा हुआ था।

माथा मैंने ऊपर मोड़ा
नमस्कार खातिर कर जोड़ा,
पूछा, 'भाई आप कौन हैं ?

बहुत मौन हैं,
हुआ यहाँ पर कैसे आना
मैंने तुम्हें नहीं पहचाना ?'

'आप नहीं मुझको पहचानें...
अरे वाह रे वाह ज़माने !'
बहुत ज़माने का परिचित हो
ऐसा बोला,
जेब टटोली,
फोटो रख दी
बोला, 'मेरा नाम प्रेम है !'

'तेरा नाम प्रेम है ?
तू ही प्रेम ?
प्रेम तू ?
रे नटखट, जा !
आँखों के आगे से हट जा !
ओ नालायक,
नहीं यहाँ तू आने लायक !
मैंने तेरा नाम सुना है,
तू बेहद बदनाम सुना है !
झटपट जा
समीप से हट जा !'

बुरा, गया वह
भला, गया वह,
मुँह खोला
पर कह न सका कुछ
चला गया वह !

समय हो गया घटना बीते

रीते अन्तर को दुबकाए
सोचा करता,
रह रह कर जी नोचा करता,
कोंचा करता है
कि उस समय वैसा करके,
बात और है,
मैं प्रसन्न रख सका बड़ों को
पर उस फोटो के टुकड़ों को
सूटकेस में रख छोड़ा है
औ' जाने क्यों
तब ठुकराने का अब रंज नहीं थोड़ा है!

निवेदन

देख लेने दो
कि सूरत बहुत मन को भा रही है,
ध्यान में बिसरी हुई
सूरत उतरती आ रही है!
देख लेने दो
कि सूरत और फिर भाए न भाए
और उसके साथ
भूली याद फिर आए न आए!

कटी शाम

कटी कटी शाम है
पिछली सब शामों से
घटी घटी शाम है !

सूरज के मन पर
कुंठाओं के फेरे हैं
दिन भर से बेअरसे
बादल जो घेरे हैं।
पवन थका ठहरा है
सन्नाटा बहरा है
खँडहर की जैसी
मनहूसी का पहरा है।
ऊँचे आकाशों में
चील नहीं डोली है
घर जाते पंछी ने
चोंच नहीं खोली है।
रोली रह गई धरी
किरणों के हाथों पर
जाते चढ़ भी न सकी।
टीलों के माथों पर।

टीलों के कोरों में
कलकल के शोरों में
सटती सायाओं से
हटी हटी शाम है !
कटी कटी शाम है !

सपनों का दान

सपने बाँट रहा हूँ
ले लो,
ले लो बच्चो
इनसे खेलो !

मत सपनों का बाग उगाओ
भोला भाला, ताज़ा ताज़ा रक्त
न इनके लिए खपाओ !
सपनों की खूराक भयानक है दुनिया में
भोले और जवान खून पर ये जीते हैं,
आशाओं के दर्पण पर
मुसकानों के प्रतिबिम्ब दिखा कर
दूर दूर से ही सारा शरीर पीते हैं ।

देखो, मेरे मुख पर देखो—
गालों, आँखों की गहराई !
इन सब का उभार पिघला कर
मैंने अपने सपने सींचे,
सींच सींच कर बड़ा बनाया,
बार बार जा कर सीने से इन्हें लगाया ;
कितना प्यार किया, दुलराया
ताक ताक आँखों ने इनको
जाने कितनी ज्योति गँवा दी ।
लेकिन, फूल न इनमें आए ।
रेत हो गई सारी आशा,
सारे तन का खून पी गई
बन्ध्या धरती ।

इससे कोई अर्थ निकालो
प्यारे बच्चो !
तुम सब सपनों की दुनिया में
साँस ले रहे ;
दोष तुम्हारा नहीं,
अवस्था का है
जिसमें
परियों की कल्पित मोहकता
में ही मन डूबा रहता है
और यहीं से अनजाने
सपनों के बीज हाथ आते हैं ।

इन बीजों को यहीं फेंक दो !
इन्हें उगाने की इच्छा पर
अपना कोमल तन न गलाओ,
उगे उगाए सपने लो ये
इनको ले कर मन बहलाओ !

भरे जगत के बहलावे के
भीतर पलते हुए अकेलो,
सपने बाँट रहा हूँ,
ये लो !

अपने ही गीतों के प्रति

बेंच रहा हूँ
भाव लाट के
वे पोशाकें
केवल सिली हुई रक्खीं जो
लाई गईं प्रयोग में नहीं
एक बार भी,
सिल जाने की गुनहगार है !

फैशन का कारवाँ इन्हें
बीसों गज पीछे छोड़ चुका है
इनको अपना लेने से
मुख मोड़ चुका है।
यह कपड़ा है
जो तैयार हो चुका सिल कर
और कठिन है बहुत
नयी पोशाक बनाना इन्हें उसिल कर।
यद्यपि यह भी ज्ञात मुझे है—
फैशन औ' इतिहास
स्वयं को दोहराते हैं
एक पंथ को छोड़
उसी पर फिर जाते हैं।
एक समय होगा
जब इन कपड़ों का फिर फैशन आएगा
जग इनको फिर अपनाएगा।

किन्तु, न जाने कब आए
वह दिन बेचारा

और हमारा
पोशाकों का ढेर,
कौन जाने,
तब तक तो—
सड़ सकता है
गल सकता है
जल सकता है,
चूहों द्वारा कट सकता है
दीमक द्वारा चट सकता है
कूड़े करकट, चिथड़ों टुकड़ों
के गड्ढे में पट सकता है।
इसीलिए, जो भी चढ़ जाए
भाव चढ़ाने को आया हूँ
बेंच बहाने को लाया हूँ।

एक समय के लिए
खो चुकीं ये बहार हैं।
सिल जाने की गुनहगार हैं,
एक बार भी
लाई गईं प्रयोग में नहीं
केवल सिली हुई रक्खीं जो
वे पोशाकें
भाव लाट के
बेंच रहा हूँ।

परसों तक

खेत के ग्रासपास
मेड़ उठा डाली है,
बेड़ की देखभाल में
तत्पर माली है।
ग्राज जो ग्रंकुर है
कल वही पौदा होगा
ग्रौर परसों वही
बाज़ार का सौदा होगा !

वस्तुसत्य

भूख सता जाती है तुमको
प्यास सता जाती है तुमको
नींद सता जाती है तुमको !

इन सब का अस्तित्व
तुम्हारे आगे भी उतना ही सच है
जितना और किसी के आगे !
यही नहीं, ममता के धागे,
ग्लानि, जुगुप्सा, खीझ, रोष के ताने बाने
तुमसे भी हैं उतने ही जाने पहचाने
जो कि समय असमय अनजाने
भंग कर दिया करते प्रायः मूड तुम्हारा !
तुम अपनी एकान्त साधना
तुम अपनी चिन्तन की धारा
इन सबसे तो नहीं अछूती रख सकते हो !
इनसे भाग नहीं सकते हो !
इनको दूर कभी कैसे भी
हटा नहीं सकते अपने से
मिटा नहीं सकते अपने से !

इसीलिए तो कहता हूँ—
तुम,
सबसे पहले मानव हो
फिर कलाकार साहित्यकार हो !

बासी जीवन

होटल के बैरे
रसोइए, नौकर, चाकर
तड़के से ले कर रात दस बजे तक
देना ताज़ा भोजन;
फिर प्रातः का अखबार
ग्राहकों से कुछ बचे खुचे व्यंजन—
बासी खाना
बासी खबरें
बासी मानव
बासी जीवन !

जाली के पार

गीत लिख चुका,
तारों की झीनी जाली के पार
बिना तारों का भी संसार
दिख चुका !

जाली के उस पार
समेटे बहुत बड़ा विस्तार
पड़ा संसार
जहाँ लय नहीं
जहाँ स्वर नहीं
स्वप्न की बात विचारे कौन
नींद तक जहाँ रात भर नहीं,
जहाँ पर छन्द तुकों का मेल
रहा गुड़वे गुड़ियों का खेल
जवानी और गीत बेमेल
हो गए,
खेल खो गए !
जहाँ चाँदनी और सितारों का
सारा बाज़ार
बिक चुका !

गीत लिख चुका,
तारों की झीनी जाली के पार
बिना तारों का भी संसार
दिख चुका !

लोकाचार

खाल रही हड्डियों से सटी
और ऐसे ही
सारी ज़िन्दगी कटी
चक्की चलाते ही,
भूख तुम्हारी पूरे
एक इसी आशा में
जीवन गलाते ही !
इस पर भी
दृष्टि में तुम्हारी
निकम्मा ही रहा ।

अब तो वह नहीं रहा
लोग जानेंगे ही
और बहुत सम्भव है
आ जाएँ कुछ स्नेही !
अस्तु, अब
पास से हटा कर चकिया रख दो
और सर के नीचे
ला कर तकिया रख दो ।

बाहरी अस्तित्व

बाहरी अस्तित्व
बाहर के करोड़ों द्वार खोले
ताकता है राह
रातो दिन
किधर से भी पधारे
व्याधि का पुतला,
क्षुधा का भूत,
काला चोर क्वाँरी कल्पनाओं का,
उठाईगीर लय का,
भावना के भले भोले शावकों का रक्त
दाढ़ों में लगाए
मरभुखा अजगर
चला आए किसी भी क्षण
बनाए भीतरी अस्तित्व का आखेट
जी भर कर,
कि हो प्रतिशोध जिससे
उस अजाने वैर का
जो पीढ़ियों से आज तक
चुकता न हो पाया
इसी से कैद में है
बाहरी अस्तित्व के
नाजुक सुकोमल भीतरी अस्तित्व
अब तक भी;
इसी बेदर्द कारा में
सिसक, घुट कर पला है !
कहीं से, काश,

आए हाथ ऐसा
जो कि बढ़ कर चीर डाले
निर्दयी यह क़ैद
मुट्ठी में मसल दे
और उसके खँडहरों से दूर
लेकर भीतरी अस्तित्व अपने साथ चल दे!

जीवन का संगीत

वाद्यवृन्द है जीवन
जिसकी हर गतिविधि पर
सम है, लय है
अलग अलग उपकरणों में
सन्तुलन नाद-संगति
निश्चय है।

सूरज उगना, सूरज ढलना
चन्द्र-वृत्त का घटना, बढ़ना
फसलें उगना, बढ़ना, कटना
खलिहानों से नाज सिमटना
सर्दी, गर्मी, लू, बरसातें
अपने अपने क्रम पर आते।
हर मौसम का एक समय है
इस आने जाने में लय है!

इसी तरह से—
निर्धारित समयों पर
आती जाती ट्रेनें
पूरे होने वाले वादे
माँग, तकाज़े, लेने देने,
ठीक समय पर—
मिलते वेतन
बोनस, भत्ते, छुट्टी के दिन
यथा नियम—
चलते शिक्षालय
अस्पताल, क्लब, व्यायामालय,

समय समय के
उत्सव, जलसे,
व्याह शादियाँ, मंगल-कलशे,
सब कुछ होते ठीक समय में—
जीवन बहता रहता लय में !

यह लय,
विलय नहीं हो पाई
तो, जीने की ताकत देगी,
जीवन के हर एक कदम पर
उठती हर थकान पी लेगी !

बस सेवा

बसें चल रहीं
महानगर की नसें चल रहीं !

व्यक्ति रूप से कण लोहू के
सिमट सिमट कर
हिल मिल जुल कर
बहे जा रहे
नगर कलेवर के अंगों में
जाल सरीखी बिछी हुई
बस की गलियों से ।
रक्तवाहिनी सी
नलियों से
ताजे कण पहुंचाए जाते
कार्य क्षेत्र पर
और थके लौटाए जाते ।

हचके खाते, झटके खाते,
रोज़गार धन्धों में उलझी
सांसों की कसमसें चल रहीं !
बसें चल रहीं !

वाष्पगामिनी

अँगड़ाई ले देह झटक कर खड़ी हो गई
एक सजीव प्रेरणा जैसी,
जाग उठा जीवन
गति का संचार हो गया
फूटी सहसा चहल पहल
जड़ प्लेटफार्म पर ।
किन्तु दूसरे ही क्षण
कूकी और चल पड़ी
झूम रही मदमस्ती में
वह और कहीं के लिए जा चुकी !
    मरा हुआ सा प्लेटफार्म
    चुप इधर पड़ा है
    और उधर मिट रहे
    धुएँ के धुंधले धब्बे
    आसमान पर !

दर्जी

दर्जी है एक व्यक्ति
जिसकी अभिव्यक्ति
लगी सीने से होती है,
जिसकी कमाई
पसीने से होती है।

गाहक की मर्जी से
भूल हुई दर्जी से,
काम था तमाम—
बस हाथ न धोया जी से!

तब से वह बेचारा
(पहले का आवारा)
ओठों को सीता है,
आँखों को सीता है,
सीधा है
खाता है, पीता है
जीता है।

बाज़ार

'यह उठा दो
वह बढ़ाओ
यह निकालो
वह दिखाओ,
भाव बोलो
मोल बोलो
नाप बोलो
तोल बोलो,
थोक दे दो
लाट दो यह,
बाँध दो यह
काट दो यह,
मैं यहाँ कब से खड़ा हूँ
मैं भुलाया सा पड़ा हूँ
मैं पसीने हो रहा हूँ
और मैं भी तो यहाँ हूँ!'
—शोर गुल है
हर किसी को बात बस अपनी सुनाती,
अनसुनी हो कर अधिकतर
माँग वापस लौट आती।
ग्राहकों की भीड़ है भारी
मगर दूकान कम हैं;
जिन्दगी के सुख बहुत हैं,
कान कम हैं।

नोकदार व्यक्तित्व

दुनिया नोकों की कायल है

उभरी नोकें, सुधरी नोकें
पैनी पैनी चुभन भरी हों,
गड़ कर रह जाएँ, निकलें मत
ऐसी नोकों में ही
अपना लोहा मनवाने की ताकत !

नोकदार व्यक्तित्व
कि जिसमें—
ठोड़ी, नाक, वक्ष नोकीले
भौहें, पलकें, नोकदार,
चितवन नोकीली
नोकीली उँगलियाँ, कुहनियाँ, पुट्ठे, कूल्हे !
तपते लोहे से पैनाई
वस्त्रों की नोकों में लिपटी
चाल ढाल वाणी नोकीली
नुक्कड़ की दूकान की तरह
फलदायक है !
बहुत तेज़ नोकीला जो है
वह नायक है !

तथा कथित सभ्यता आज की
नोकदार जिन्दगी जी रही !
रेत रेत घिस घिस कर
जिसने नोक निकाली
वही सफल है !
दुनिया नोकों की कायल है !

स्टीम रोलर

शक्तिशाली हो,
गठन है भार है तुममें
सही है
सड़क के सारे उभारों को
दबा सकते !
मगर
कच्छी सड़क के शेर,
तुम असमर्थ भी तो हो,
सभी कुछ खेल के नीचे
न ला सकते !
अरे स्टीम रोलर,
तुम न चल सकते
घरों के आँगनों में
अन्य भागों में !
तुम न चल सकते
दिमागों में !

छत और रुपये

आसमान से रुपये झड़ते
जो छत के ऊपर आ पड़ते।
छत मेरी सीमा है
उसके ऊपर
मुझे नहीं जाना है,
रुपया मुझे नहीं पाना है!
मैं हूँ,
ऊपर छत है,
छत के ऊपर रुपये भरे पड़े हैं!
(मरे पड़े हैं!)

शार्ट कट

मुझे शार्ट कट नहीं चाहिए

कोई ऐसी राह बता दो
जो चक्कर खाती जाती हो
कोसों मीलों भटकाती हो,
मंज़िल पा जाने की जल्दी
मुझे नहीं है !

मुझे शार्ट कट नहीं चाहिए !
मुझे भटक लेने दो जी भर
जब तक ऊब उठूँ, घबराऊँ
ठोकर खाऊँ, सर टकराऊँ
एकाकीपन में, निर्जन में
मारा मारा फिरूँ, पुकारूँ
गला सूख जाए, तड़पूँ मैं ।

ऐसी घोर यातनाओं के बिना
न प्यास निखर पाएगी,
मंज़िल नीरस हो जाएगी !

दर्पण

'हममें प्रतिबिम्बित हैं आप'
—गलत है बिल्कुल !
दर्पण नहीं हैं हम !
हममें यदि झाँक कर
निहारेंगे आप कभी,
बाहर से कैसे हैं
देख यह नहीं सकते !
उतरेंगे अक्स नहीं
टाई के, टोपी के,
साफे के, काजल के,
बिन्दी के, लाली के
बल्कि, यहाँ दीखेगा—
पीछे क्या है इनके !
उभरेंगे नंगी सच्चाई के चित्र यहाँ,
आप भले बिचकें, मुँह भींचें, भौंहें तानें !
दर्पण नहीं हैं—
कि आपके इशारों पर
किसी कारखाने में ढाल दिये जाते हों
जैसा भी रूप आप बाहर से ओढ़े हों,
वैसा प्रतिबिम्ब गढ़ें
तब तक तो आपके सिंगार कक्ष में ठहरें
अन्यथा निकाल दिए जायँ,
तोड़ डाले जायँ !
दर्पण नहीं हैं हम !
आपके स्वरूप पर
समर्पण नहीं हैं हम !

भाड़ और चने

संगठित रहे
फिर भी
भाड़ में गए हम
तो भाड़ को न फोड़ सके !
भाड़ हमें फोड़ गया !
सोच रहे हैं तब से—
भाड़ की चुनौती को
संगठन जरूरी है ?
....

मिल जुल कर
भाड़ कभी फोड़ हम न पाएँगे !
मिल जुल कर जोड़ नहीं पाते हम
सारा बल,
निर्भर हो जाते हैं !

अच्छा है इससे
हम अलग अलग यत्न करें,
सारा सामर्थ्य जोड़
अलग अलग जगहों पर
अलग अलग चोट करें !

भाड़ नहीं फूटेगा—
भीड़ों से मेलों से !
फूटेगा ही
तो यह केवल अकेलों से !

राह का प्रश्न

पूछती है राह—
कितनी दूर तक जाना तुम्हें है ?
पूछता राही
कि कितनी देर भटकाना तुम्हें है ?

प्रश्न यह कोई नया है
बात कुछ ऐसी नहीं है।
हर किसी से राह
ऐसा प्रश्न करती ही रही है।
राह की आदत
कि वह चेरी उसी की
जो बनाए,
राह की मर्ज़ी
कि कितनी देर भटकाए घुमाए।
ठीक है,
पर राह यह भी जान ले
अच्छा रहेगा—
राह का चाही
नज़ाकत भी नहीं ज़्यादा सहेगा।

आदमी है वह
बगल के और पत्थर तोड़ लेगा,
राह कर लेगा नयी
सम्बन्ध अपना जोड़ लेगा!

डाई प्रिंट

ये रुपहले पृष्ठ
शादी के निमंत्रण-पत्र जैसे
ज़िन्दगी के पृष्ठ
जिन पर लाल लाल उभर रहा
अनुराग का स्वीकार
डाई प्रिंट जैसे अक्षरों में—
यह सहज उभरा नहीं है !

ये खड़ी टेढ़ी लकीरें
(अक्षरों के भ्रम)
बड़े बेदर्द कोड़ों की कसन हैं !
पैर से सर तक
उभर आई लकीरों में
जमा है लाल ज़िन्दा रक्त
पीड़ा को दबाए
ज़िन्दगी की प्यास ले मुसका रहा है !

ज़िन्दगी की प्यास
गाढ़े रक्त का विश्वास
हारेंगे नहीं;
हर यातना के सामने बढ़ कर
खुशी के साथ तन देंगे !
उभरते चिह्न कोड़ों के
बुढ़ापे में बहुत गहरी शिकन देंगे ।

ऊँट

दो सैनिक टोलियाँ भिड़ गईं
चलीं मशीनगनें दोनों पक्षों से डट कर
कई सिपाही घायल हुए
(अभी जीवित हैं)
तीन ऊँट मर गए गोलियाँ लग जाने से
—समाचार पत्रों में ऐसा आज छपा है।

घायल सैनिक
जो, ले आए गए
और आक्सीजन दे कर
वायुयान से अस्पताल को गए उड़ाए,
जी सकते हैं !
मर भी जाएँ तो--
ये सब बेस्वार्थ नहीं थे,
जान बूझ कर वहाँ गए थे
उनके घर वालों को
उनकी कीमत कुछ मिल ही जाएगी !
किन्तु, स्वार्थों की टक्कर में
मारे गए ऊँट बेचारे
निरपराध ही !
उनकी गई जान के बदले
उनके कुनबों को
कोई सरकार भला मुआवज़ा देगी ?
इन तीनों ऊँटों के बदले
कोई तीन ऊँट सुविधाएँ पा जाएँ
क्या ऐसा होगा ?

ऐसा कभी न होगा ऊंटो,
क्यों बहुत भोले हो तुम
चालाक नहीं हो
क्योंकि नहीं सामर्थ्य
कि तुम सब संघ बना कर आगे आओ,
अपने हित के लिए लड़ सको !
इसीलिए, तुमको आक्सीजन नहीं मिलेगी
वायुयान से अस्पताल के लिए न तुम भेजे जाओगे,
इसीलिए, जिस धरती पर तुम जन्मे
उस पर रहने का भी
जन्म सिद्ध अधिकार तुम्हारा छिना जा रहा !

इधर आदमी का विस्तार बढ़ा जाता है
जन संख्या की प्रगति बहुत विस्तार लिए है
भोजन जिसके लिए चाहिए !
जंगल कट कर खेत हो रहे
और तुम्हारा रहने का आधार जा रहा !
जितना ही बढ़ रहा आदमी
उतना तुम घटते जाते हो,
और लग रहा है
तुम घटते हो जाओगे,
कहाँ गोलियाँ, तोपों के आगे
असहाय ठहर पाओगे !
प्रगतिशील विज्ञान
तुम्हारी रही सही आवश्यकता भी ले डालेगा।
जब धरती के कोने कोने पर
आदमी मशीन धरेगा,
स्वार्थ भरा आदमी
तुम्हें रहने मत देगा बिना काम के !

भूल जायगा, सहस्राब्दियों से तुमने जो सेवाएँ कीं
सोच रहा हूँ, प्यारे ऊँटो;
तब क्या होगा ?

तब क्या चिड़ियाघर की जेलों में ही
तुम रहने पाओगे ?
या कोड़ों से पिट पिट कर
सर्कस में ही मन बहलाओगे ?
अथवा, केवल कागज़ पर छप कर
दीवारों पर लटकोगे,
मिट्टी, रबड़, काठ के हो कर
फुटपाथों के पास बिकोगे ?
क्या भविष्य है यही
तुम्हारे अस्तित्वों का ?

उपन्यास का पहला पन्ना

नयी नयी पुस्तक आई है
उपन्यास है,
उपन्यास का पहला पन्ना खोल रहा हूँ !

डोल रहा हूँ मन में
यह पुस्तक का पन्ना
एक अबोध अजाने बालक सा
मुझको उँगली पकड़ा कर
जाने किस अनजान देश को ले जाएगा
औ' मैं साथ चला जाऊँगा ।
उसकी आकर्षक बातों में
डूबा डूबा सा, खोया सा,
जब तक छोड़ न दे वह मुझको
उसको छोड़ नहीं पाऊँगा ।

इतना निश्चित—
जहाँ जा रहा हूँ
वे देश नहीं पहचाने
हरे भरे हों या वीराने !
वह ले जाए कहाँ न जाने—
बाह्य जगत से अन्तर्मन तक
कितने टीले मुझे चढ़ाए
कितनी खोहें मुझे झँकाए,
या दिखलाए—
खिली धूप से, खुली हवा से
हँसते चेहरे
या मैले मनहूस

रोग से नीले पीले लोग इकहरे,
रूमानी व्यापार
प्रेम के धन्धे कामी,
आत्मघात की पटरी पर गर्दन डाले
घुटती नाकामी !
शैतानी पंजों जैसी जकड़ी
सीमाओं पर प्रहार दे,
पतली घनी हवाओं पर तैरा कर
फिर नीचे उतार दे !

डोल रहा हूँ,
उपन्यास का पहला पन्ना
खोल रहा हूँ !

जागते सोते

जैसे आफिस से आने में
बेशक बहुत देर हो जाए,
और देर तक राह देख कर
बिस्तर पर पत्नी सो जाए
जैसे घर वापस आने का ही
यह कोई समय नहीं हो,
जैसे आफिस से भी ज़्यादा
उसको अपनी नींद सही हो,
जैसे मैं केवल अपने ही लिए
कमाने को जाता हूं,
जैसे सब उसका पूरक है
जो घर पर खाना खाता हूँ,
जैसे वह अपनी पत्नी हो
या कि किराये की औरत हो,
जैसे वह औरत भी हो सकती है
इस पर ही हैरत हो,
जैसे आए क्रोध
कि यह पत्नी आखिर किसलिए बनी है,
जैसे इस पर ही विश्वास न आए—
यह मेरी अपनी है,
जैसे खीझा हुआ
न कपड़े जूते मोज़े आदि उतारूँ,
भोजन पानी किए बिना ही
सो जाने को पैर पसारूँ
(यह सोने का कौन ढंग है !)
करवट बदलूँ, नींद न आए,

किन्तु, पसीना सूखे,
जैसे कुछ दिमाग ठंडा हो जाए
और लगे—
मेरा ही सारा दोष
कि देरी से आया हूँ,
दुनिया घूम रही तेज़ी से
रोक कहाँ सकता, यदि चाहूँ
जैसे लगे कि यह पत्नी भी
इस दुनिया का एक अंग है,
जैसे लगे कि यह दुनिया ही
साथ चल सको तभी संग है,
जैसे लगे कि सोने का था समय
इसी से नींद आ गई
और कि सोई मुद्रा में भी,
पत्नी मन को बहुत भा गई,

ऐसे ही भा गई बात—
(जब लगा थकी दुनिया सोती है
जो कविता को पूछ रही थी—)
'क्या यह रोटी या धोती है ?'

कौए

ये जो कौए बोल रहे हैं
भोर हो गई
यह मत समझो !

ज़रा ध्यान दो—
इनकी बोली में
बोली कम
चीख़ अधिक है ।
शायद कोई दुर्घटना हो गई
घोंसलों में कौओं के,
शायद कोई साँप
विषैला कीड़ा
कोई घातक प्राणी
चुपके से चढ़ गया पेड़ पर
और किसी कौए के बच्चे को
पकड़ा है, खा डाला है !
यह अलार्म है,
डर है
खतरे की आवाज़ गूँज उठी है ।

कैसे नियत समय पर ही बोलें
जब मौतें पास खड़ी हैं ?
कौए हैं ये
नहीं घड़ी हैं !

अध्यात्म

हम क्या हैं ?

और कुछ नहीं,
केवल
सृष्टि के प्रणेता के
अमुखर अन्तर्मन के
वेगों, आवेगों, इच्छाओं, कुंठाओं
के ही हैं साकार रूप,
यों कहिये—
उसके दृष्टान्त
(इलस्ट्रेशन) हैं।

प्रतिक्रिया

पत्र मिला
पढ़ा गया
खुला छोड़ दिया गया,
बाद में उठाया गया
और मोड़ दिया गया,
क्षण भर तक सोचा गया
फिर कस कर
मुट्ठी के भीतर
दबोचा गया,
फेंक दिया गया
जैसे—
सूखा हुआ पान
या शैतान बच्चे का
उमेठा हुआ कान !

रद्दी की टोकरी

व्यस्त कार्यालय के भीतर
रद्दी की टोकरी धरी है पास मेज के
जिसमें छोटे बड़े समूचे आधे चौथे,
फटे मुड़े सिकुड़े ड्योढ़ाए
गन्दे-उजले उसले-पुसले
अनगिन कागज भरे हुए हैं,

ठीक उस तरह
जिस प्रकार मेरे दिमाग में
एक ओर
अनगिनत अनुपयोगी अनचाहे
बासी जीर्ण विचार,
भावनाओं के टूटे फूटे टुकड़े
अप्रशस्त से
अस्त व्यस्त से
गरे हुए हैं !

खून

खून कर गए दो घंटों का
आ पहुँचे ज्यों हुआ सवेरा,
चाट गए रविवार आज का
देकर मनहूसी का फेरा।
बिला वजह ही दाँत निपोरे थे,
चौड़ा सा मुँह बाए थे।
        नत्थूखैरे जी आए थे।

बुझी हुई छुरी

बुझी हुई छुरी से
ज्यादा ज़हरीला है
बुझा हुआ आदमी !

बुझी हुई छुरी
डसती औरों को ही ;
बुझा हुआ आदमी
औरों को डसता है ,
अपने को भी !

आगामी कल

'आगामी कल को मरने दो !'
बहुत ठीक है,
मर जाने दो !
सर पर चढ़ा रहा करता है
कल से नींद न लेने देता,
अच्छा है यह मर जाए ही !
सारी चिन्ताएँ हट जाएँ
मिल जाए हम सब को फुरसत !
....
लेकिन शंका एक हो रही—
कोई भी मरने वाला
पहले जन्मेगा
तब न मरेगा !
....
शायद आज नहीं मर सकता
आगामी कल !

संस्कार

कन्या आई
गई झुलाई ;
फिर बैठाई ,
खड़ी की गई—
पाल पोस कर
बड़ी की गई ।

बड़ी हुई—
कुछ अन्य हो गई ।
बाप डरा ,
माँ धन्य हो गई !

स्वर साधन

कितनी सुरीली थी
फेरी वाले ने खुद
बजा कर सुनाई थी
तब खरीद लाए थे ।

घंटों से उलझे
पसीने पसीने हो
किन्तु, स्वर निकाल नहीं पाते
वैसे मीठे !
साँस धौंकनी सी
उँगलियाँ हथौड़े सी
चलती हैं
स्वर में बारीकी कैसे आए !

रख भी दो
और पोंछ डालो पसीने को—
बाँसुरी नहीं बजती,
बजता है आदमी !

महाजनो येन गतः स पन्थाः

कैंची काट काट कर चलना
ठीक नहीं है !
'महाजनों' द्वारा स्वीकृत
यह लीक नहीं है !
जग में सीधा पथ अपनाओ,
बनो राम की तरह !
जीवन की इस बड़ी सड़क पर
चलो ट्राम की तरह !

कुत्ता छाप आदमी

कौन सी है संस्था
कौन सी अकादमी
जहाँ बना करते हैं
कुत्ता छाप आदमी ?

सीने पर एक बड़ा
कुत्ता छपाए हुए
बनियाइन धारी
दिखलाई पड़ा था पट्ठा
प्रश्न एक ऐसा
उठ आना स्वाभाविक था—
कौन सी है संस्था......?

तगड़े पर कुत्ते की
छाप भला कैसी है ?
लगता है मुझको
कि बात कुछ ऐसी है—
जो हट्टा कट्टा हो,
जो बाँका पट्ठा हो
उस पर समाज और
राज का न तन्त्र है,
कुत्ता हो जाने को
आदमी स्वतन्त्र है !

आज का सत्य

पाउडर आँखों में लगाओ
काजल ओठों में लगाओ
लिपस्टिक नाक पर मलो,
किन्तु
हरगिज़ स्वीकार न करो
कि पाउडर गलत स्थान पर लगा है
काजल गलत स्थान पर लगा है
लिपस्टिक गलत स्थान पर लगी है,
बल्कि
ज़ोर दे कर
चिल्ला कर
गला फाड़ कर
प्लीड करो—
आँखें गलत स्थान पर लगी हैं,
ओठ गलत स्थान पर लगे हैं,
नाक गलत स्थान पर लगी है !

एक पत्रोत्तर

बिन्दु बिन्दु जी,

तीन महीने ढलते ढलते
दसवाँ पत्र तुम्हारा आया,
किन्तु न मैं निश्चित कर पाया—
आखिर अपने समाचार मैं तुम्हें लिखूँ क्या !

तुम्हें खलेगा, यदि मैं लिख दूँ—
यह नगरी उस नगरी से कुछ
बीस गुनी तो शानदार है,
तुम्हें खलेगा, यदि मैं लिख दूँ—
इसे छोड़ने को मेरा जी
नहीं ज़रा भी बेकरार है,
तुम्हें खलेगा, यदि मैं लिख दूँ—
याद तुम्हारी मुझे
बहुत ही कम आती है,
तुम्हें खलेगा, यदि मैं लिख दूँ—
बहुत अधिक पत्रों के लिखने
की आदत न मुझे भाती है,
तुम्हें खलेगा, यदि मैं लिख दूँ—
ठाट बाट से सजा
यहाँ मेरा दफ्तर है,
तुम्हें खलेगा, यदि मैं लिख दूँ—
मेरे इस दफ्तर की लड़की
तुमसे बहुत अधिक सुन्दर है,
तुम्हें खलेगा, यदि मैं लिख दूँ—
वह लड़की बेहद मादक है, मतवाली है,

तुम्हें खलेगा, यदि मैं लिख दूँ—
इसके साथ साथ ही वह प्रतिभाशाली है,
तुम्हें खलेगा, यदि मैं लिख दूँ—
नृत्य कला में वह माहिर है,
तुम्हें खलेगा, यदि मैं लिख दूँ
गाने में भी वह जाहिर है
तुम्हें खलेगा, यदि मैं लिख दूँ—
उसकी आँखों पर केशों पर बलिहारी है,
तुम्हें खलेगा, यदि मैं लिख दूँ—
उसकी चाल ढाल गति विधि सब
मुझको बहुत अधिक प्यारी है,
तुम्हें खलेगा, यदि मैं लिख दूँ—
उसको मुझसे बहुत प्रेम है,
तुम्हें खलेगा, यदि मैं लिख दूँ—
मुझको उससे बहुत प्रेम है,

इस सब के पीछे यदि लिख दूँ—
मैं प्रसन्न हूँ, मैं सकुशल हूँ,
ऐसा है विश्वास कि यह भी खल जाएगा !
तुम्हीं बताओ
ऐसी हालत में कोई क्या लिख पाएगा ?

पब्लिक मीटिंग

भाइयो, बहनो,
जूतियाँ चप्पल पहनो !
मंच पर न फेंको इन्हें
रहने दो,
जो कुछ भी कहता है
कहने दो।

यहाँ वह
रुकेगा नहीं,
सरे आम
जूतियों के आगे झुकेगा नहीं।
अपनी ही धुन में वह
माइक पर झूलेगा
बाहर अकेले में
जूते खुद छू लेगा।

मकड़ी

मकड़ी,
तू अभिमान कर रही
इस जाले पर
जो इतना बारीक
दिखाई कठिनाई से पड़ सकता है
और शिकार पकड़ सकता है ?
अरी बावरी,
इन्सानों के जाल कहाँ देखे हैं तूने !

कठिनाई से सही
दिखाई तो तेरे जाले पड़ जाते !
हम ऐसे जाले फैलाते
लाख कोशिशें करने पर भी
नहीं दिखाई जो देते हैं
किन्तु, शिकार पकड़ लेते हैं !

मुख पृष्ठ

यह सजी सजाई नयी नयी
सुन्दरता घर में आई है
घर में शोभा ले आई है,
तुम इस पर आफत ढाओ ना !
आते ही कवर चढ़ाओ ना !

बेशक, जो कुछ पढ़ना है
उसके भीतर है
पुस्तक रखने का मतलब
भीतर से ही बहुत अधिकतर है
लेकिन, जो कुछ ऊपर है
उसका भी तो कोई मतलब है
ऊपर देखना बहुत होता
भीतर पढ़ना तो जब तब है।
जब तक ऊपर से है उभार
ताज़गी, रँगीला आकर्षण
तब तक आती जाती आँखों के लिए
इसे कर दो अर्पण।

हर नया, पुराना होता है,
जो कुछ न देखने के काबिल हो
उसे चुराना होता है !
मैले पर
उजला रूप मढ़ाना अच्छा है,
बूढ़ी पुस्तक पर
कवर चढ़ाना अच्छा है !

गज भर लम्बी आँख

"रुकिए, रुकिए, किधर जा रहे
नहीं उधर से है निकास जी,
रास्ता नहीं, उधर गढ़ा है !"
सुन कर बोले सूरदास जी—
    "धन्यवाद है, धन्यवाद है,
    कृपा आपने बड़ी दिखा दी;
    गज भर लम्बी आँख लिए हूँ !"
    (और हाथ की छड़ी दिखा दी ।)

मितव्यय

एक फूल
बस एक सुगन्ध दिया करता है ?
और दूसरे दिन तक
मुरझा भी जाता है ?
नागवार है !
नहीं लगेंगे गमलों में ये फूल आज से !

ले आ कर
इनमें कागज़ के फूल लगा दो !
देशी और विदेशी इत्रों की
शीशियाँ मँगा कर रख लो !
नया इत्र हर रोज़ लगाया जाएगा
फूलों के भीतर,
रोज़ नयी खुशबू ये देंगे,
और महीनों तक
ताज़े भी बने रहेंगे !

ज़रूरी बात

आते ही बोले कि
"आप से मेरा बहुत पुराना परिचय !"
क्या उत्तर में कहूँ
नहीं जब तक मैं कर पाया था निश्चय
वे आगे कह चले,
"आपसे मेरी कोई नहीं दुश्मनी ?"
"बहुत ठीक है", मैंने पूछा,
"लेकिन इससे बात क्या बनी ?"
"बात बनी क्या, बिगड़ चुकी है,
पड़ा इसीसे मुझको आना,
बड़ी भूल कर रहे आप हैं
यही आपको था समझाना।"
"बड़ा कष्ट हो गया आपको,
पर ऐसी भी कौन बात है ?"
"अरे महाशय आँख खोलिए
दिन फैला है, नहीं रात है !"
"वह मैं बिलकुल देख रहा हूँ,
कहिये आखिर कहना क्या है ?"
"कहना क्या है, आप अँधेरे में हैं !
ऐसा रहना क्या है !
मैं न आपको रहने दूँगा
सीधे हैं सो ठगे जा रहे,
पास आपके जो कुछ भी है
उस सब को घुन लगे जा रहे !"
"साफ साफ कहिए
कि आपके आ जाने का क्या मतलब है ?"

"यही किया जाए बस उससे,
बिलकुल ठीक जवाब तलब है !"
"किससे ? आखिर कौन,
कि जिससे नहीं आपकी कभी पटी है ?"
"नहीं आपकी कभी पटेगी,
वह इतना झूठा कपटी है !
कल तक वह मेरा नौकर था
आज आपका सहकारी है,
आगे फिर हलाल होने की
पता नहीं किसकी बारी है !"

"ओ हो समझा, आप कौन हैं
क्या हैं, क्यों हैं, क्यों प्रसिद्ध हैं !
मुझे पता है
आप नौकरों के प्रयोग में बहुत सिद्ध हैं !
खैर, अभी दस मिनट बाद
आता है वह मेरा सहकारी
तभी यहाँ पर हो जाएँगी
बातें उसकी और तुम्हारी !"
"ऐं ऐं, अभी आ रहा ?
लेकिन, देर हुई अब मैं जाऊँगा,
यही ज़रूरी बात बतानी थी,
जल्दी है, कल आऊँगा !"

बीता लगभग वर्ष
नहीं अब तक वे बहुरे !
ऊँट चुराने को
आए थे निहुरे निहुरे !

बिखरे पन्ने

सम्बन्ध तुम्हारा टूट चुका
यह हमें पता,
बन्धन को तुमने दे डाली
या बन्धन ने दी तुम्हें धता।
कुछ बुरा हुआ सा लगा भले
पर यह मौका है—
तुम अपनी असली सत्ता में आ निकले!

यह बहुत गलत पुस्तक थी
जिसमें सिले हुए तुम अब तक थे!
अब पलट चुके पिछले तख्ते,
पछताओ मत
आगे आओ
ऐसे ही और बहुत पन्ने
तुम इनके साथ समा जाओ
लग जाओ एक दूसरे से
गठबन्धन कर के ग्रन्थ बनो,
टूटे फूटे गलियारों की
छाती पर चिकने पंथ बनो!

बाढ़ के बाद

टूट गईं सीमाएँ, मर्यादाएँ छूटीं
रूठी नदी
किनारों के सारे बन्धन को तोड़
वह चली
फसल और पेड़ों पौधों की पाँत
ढह चली,
झोपड़ियाँ बह गईं
तमाम मकान गिर गए,
पानी से
पथ, गलियारे औ' गाँव घिर गए।
डूब गईं झाड़ियाँ
घोसले अण्डे ले कर दूर जा बहे
चुगने गए पक्षियों के
अनदेखे उजड़े स्वप्न लहलहे।
बने बनाए खेतों का,
बागों का सत्यानाश हो गया,
ऐसे में कितनों का तो
ईश्वर से ही विश्वास खो गया!

यह बहना खोना
आखिर में थमा,
नदी का क्रोध कम हुआ।
साँसों की गति सरल हो चली
जीवन का गतिरोध कम हुआ।
आखिर, सरिता ने
पिछली सीमाओं को फिर से अपनाया,

छूटी मर्यादाओं के
फिर आलिंगन को हाथ बढ़ाया ।
नये सिरे से,
विश्वासों के ढीले बन्धन
कड़े हो गये,
उखड़े, गिरे, अधमरे पौदे
पीठ मोड़ कर खड़े हो गए,
नये सिरे से फसलें उगने लगीं
उगे अंकुर ठूँठों में,
गीली मिट्टी की थापें पड़ चलीं
घरों टूटे फूटों में ।
नयी टहनियों पर
ताज़े तिनकों से फिर बन चले घोंसले
जगी ज़िन्दगी
नयी जवानी, नया जोश ले, नया होश ले,

जैसे वैरागी की इच्छा
फिर दुनिया की ओर मुड़ी हो,
जैसे गलतफहमियों से टूटी
फिर से दोस्ती जुड़ी हो !

दीवारों से

बहुत बड़ा आकर्षण होती हैं दीवारें
उभरीली
लोगों की आँखों में चढ़ी हुई !

लोग दौड़ पड़ते हैं
इसलिए नहीं
कि उन्हें मान दें, प्रतिष्ठा दें ;
बल्कि, उन्हीं पर
जा कर लिख दें
या चिपका दें
पोस्टर बड़े बड़े—
        दवाओं के, फैशन के,
        अन्य किसी ऐसे
        प्रतियोगी उत्पादन के,
जो बिना ज़रूरत,
ज़रूरत पैदा कर दें
औ' भोली जनता
(अधिकांश जो यही है)
से
खींच खींच पैसे
तिजोरी उनकी भर दें !

        सावधान दीवारो !
        अपनी ऊँचाई, मज़बूती, उभार
        किसी कीमत पर मत बेचो !
        दीवारो,
        पोस्टरों से बचो !

मेरा अधिकांश

इन सब में मेरा अधिकांश नहीं जीता है !
मेरे व्यक्तित्व के बहुत छोटे टुकड़े हैं—
ये जो कविताएँ हैं
शब्दों की थोड़ी जो जोड़ गाँठ मैंने की
कभी कहीं किंचित् रेखाएँ जो खींची हैं,
इन सब में मेरा अधिकांश नहीं जीता है !

ये सब तो मन के अटकावे थे
फ़ुरसत के,
भीतर की हार के बनावटी भुलावे थे;
इनके विस्तारों पर मुझको मत पहचानो !

मैं, जो बेअंकुश हूँ, ज़िद्दी हूँ, काहिल हूँ
भारी कामों से जो बेहद घबराता हूँ
मैं, जो बेनिश्चय हूँ,
कहीं किसी धन्धे से चिपक नहीं पाता हूँ,
मैं, जो अनुत्तरदायी हूँ, अनागर हूँ
तौर तरीकों का जो बहुत नहीं कायल हूँ,
मैं, जो असंचित हूँ,
खोने का आदी हूँ ।

ऐसी ही बेचाही, बेमानी बातें हैं
जो मेरी आदत हैं—
मेरा अधिकांश इन्हीं बातों से भरता है !
इनसे भी क्या
तुमको उतनी ही ममता है ?

मेरा अधिकांश तुम्हें प्रिय है क्या ?
बतलाओ !

यदि यह भी प्रिय है
तो······
तब तो मैं क्या बोलूँ······
तुम मेरी श्रद्धा हो ,
तुम मेरी पूजा हो !
तब मैं तुम्हारे ही चरणों पर आनत हूँ !
स्नेह तुम्हारा मुझे उठाएगा,
पथ देगा,
आस्था त्रुलाएगा
लक्ष्य की शपथ देगा ।

आहत सत्य

ठोकर खा कर गिरे सत्य,
कन्धा मत डालो,
शिथिल न हो
मत बुझो अभी
साँसें मत तोड़ो !
अभी बहुत सा पन्थ शेष है !

दम ले लो
साहस बाँधो
फिर बढ़ कर
पिछड़ी राह पूर लो !
गिरते पड़ते भी
कन्धे से कन्धा जोड़ो,
आहत हो कर भी
असत्य की तेज़ दौड़ में
साथ बढ़ चलो !
तुम असत्य के परिचायक हो !
तुम न रहे
तो, यह असत्य ही
सत्य समझ बैठा जाएगा !
और राह का अन्वेषी
आँखें खो देगा,
टकराएगा !
बेबस, शोर शराबे का
अनुसरण करेगा !

इस यात्रा की भी

इति होगी;
कुहरा सिमटेगा,
नीचे की धरा दिखेगी
वस्तुस्थिति आगे आएगी।
और तभी
जब, सहसा सपने ढह जाएँगे,
सींकों के रथ
टूट टूट कर उड़ जाएँगे,
भाग दौड़ का सारा जोश
बिखर जाएगा,
प्राण घुटेंगे
साँसें अटकेंगी
छाती से हाथ लड़ेंगे;
मुँह ढकने को जगह न होगी—

तब
तुम होगे
केवल तुम
लँगड़े, टूटे, खण्डित, जैसे भी,
एक तुम्हारी गोदी में ही
ठगी हुई ज़िन्दगी
छिपा कर मुँह
रोएगी,
पछताएगी !
तुम होगे
जो, हाथ पीठ पर फेरोगे
आँसू पोंछोगे !
हाथ थाम कर खड़ा करोगे,
फिर चलने का साहस दोगे !

कृपया

६ठे पृष्ठ पर ऊपर से ७वीं पंक्ति में *चट्टानों* के स्थान पर *चट्टानों*, २६वें पृष्ठ पर नीचे से २री पंक्ति में *तारों* के स्थान पर *तारों*, ३२वें पृष्ठ पर ऊपर से ३री पंक्ति में *से* के स्थान पर *ये*, ३७वें पृष्ठ पर ऊपर से ७वीं पंक्ति में *कच्छी* के स्थान पर *कच्ची*, इसी पृष्ठ में ६वीं पंक्ति में *खेल* के स्थान पर *रोल* और ४५वें पृष्ठ पर ऊपर से २री पंक्ति में *क्यों* के स्थान पर *क्योंकि*

कर लें